MAINS MATRIX

TABLE OF CONTENT

1. भारत के श्रम संहिता (Labour Codes) का कार्यान्वयन
2. मेलघाट के आदिवासी-बहुल क्षेत्रों में शिशु मृत्यु की निरंतरता को समझना
3. सुप्रीम कोर्ट का राज्य विधेयकों पर राज्यपाल की शक्तियों संबंधी परामर्शात्मक मत
4. राज्यपालीय विवेकाधिकार का विस्तार: सुप्रीम कोर्ट के परामर्शात्मक मत का विश्लेषण
5. समाज को सम्मानजनक और खुले संवाद को पुनः स्थापित करना होगा
6.भारत में संख्यात्मकता की खाई को पाटना
7. "1 डॉक्टर प्रति 1,000 लोग" मानक को स्पष्ट करना – WHO की मिथक को तोड़ना

भारत के श्रम संहिता (Labour Codes) का कार्यान्वयन

भारत का श्रम नियामक ढांचा एक बड़े परिवर्तन से गुजर रहा है। संसद द्वारा 2019–2020 के बीच पारित चार श्रम संहिताएँ—**वेतन संहिता**, **औद्योगिक संबंध संहिता**, **सामाजिक सुरक्षा संहिता**, तथा **व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्य परिस्थितियाँ संहिता**—कुल 29 पुराने श्रम कानूनों को एकीकृत करती हैं। इनका उद्देश्य अनुपालन बोझ को कम करना, परिभाषाओं का मानकीकरण करना और श्रमिक संरक्षण को आधुनिक बनाना है।

कार्यान्वयन की स्थिति

यद्यपि केंद्र सरकार ने नियम-निर्माण प्रक्रिया पूरी कर ली है, लेकिन श्रम संहिताओं को तभी लागू किया जा सकता है जब केंद्र और राज्य दोनों अपने-अपने नियमों की अधिसूचना जारी करें। अधिकांश राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों ने मसौदा नियम प्रकाशित कर दिए हैं, परंतु पूर्ण कार्यान्वयन अभी लंबित है, जो कि भारत के संघीय ढांचे की जटिलताओं और प्रशासनिक संकोच को दर्शाता है।

सुधार की आवश्यकता और समर्थन

उद्योग और निवेशकों के दृष्टिकोण से यह सुधार लंबे समय से अपेक्षित संरचनात्मक परिवर्तन है। पुराने कानूनों का तंत्र अक्सर कठोर, अप्रत्याशित और औपचारिक रोजगार सृजन के लिए बाधक माना जाता था। श्रम संहिताएँ निम्नलिखित लाभ प्रदान करने का वादा करती हैं:

- सरलित अनुपालन
- बेहतर श्रमिक–नियोक्ता संबंध
- व्यापक सामाजिक सुरक्षा कवरेज
- बेहतर वेतन संरक्षण

यह अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत को 2030 तक प्रतिवर्ष लगभग **78.5 लाख गैर-**

कृषि रोजगार सृजित करने होंगे ताकि प्रत्येक वर्ष कार्यबल में प्रवेश करने वाले लगभग **1.2 करोड़ युवाओं** को समायोजित किया जा सके।

चिंताएँ और आलोचनाएँ

श्रम संघों और श्रमिक संगठनों का तर्क है कि ये सुधार “नियोक्ता-हितैषी” लचीलापन बढ़ाते हैं और सुरक्षा कमजोर कर सकते हैं। आलोचनाओं में शामिल हैं—

- सामूहिक सौदेबाज़ी का क्षरण
- छंटनी के लिए उच्च सीमा
- द्वितीय राष्ट्रीय श्रम आयोग (2002) की सिफारिशों पर अपर्याप्त विचार

कई लोगों को आशंका है कि अधिकारों के स्थान पर 'व्यवसाय सुगमता' को प्राथमिकता दी जा रही है।

कार्य की बदलती प्रकृति

नई श्रम संहिताओं को कार्य जगत के बदलते स्वरूप का समाधान करना होगा, जिसमें शामिल हैं—

- गिग और प्लेटफ़ॉर्म कार्य
- कृत्रिम बुद्धिमत्ता और स्वचालन
- पारंपरिक नियोक्ता–कर्मचारी संबंधों का विघटन

ये परिवर्तन सामाजिक सुरक्षा वितरण को जटिल बनाते हैं और कार्य, वेतन व कार्य परिस्थितियों की पुरानी अवधारणाओं को चुनौती देते हैं।

त्रिपक्षीय सहमति की आवश्यकता

भारतीय श्रम सम्मेलन (ILC)—जो भारत का प्रमुख त्रिपक्षीय परामर्श मंच है—2015 से नहीं बुलाया गया है। इतने बड़े पैमाने के सुधारों के लिए सरकार, नियोक्ता, श्रमिक और राज्यों के बीच नए सिरे से संवाद आवश्यक है। **47वाँ ILC** बुलाना विश्वास और वैधता निर्माण के लिए अनिवार्य है।

आगे की राह

सफल कार्यान्वयन के लिए आवश्यक है—

- कृषि एवं औद्योगिक उत्पादकता में समग्र सुधार
- श्रमिक–नियोक्ता विश्वास को मजबूत करना
- वैश्विक अनिश्चितताओं के प्रति नीति की सहनशीलता
- आधुनिक कार्य रूपों के प्रति संवेदनशीलता

श्रम सुधारों को आर्थिक दक्षता और श्रमिक गरिमा—दोनों के बीच संतुलन बनाना होगा। श्रम संहिताएँ भारत की श्रम बाज़ार संरचना को आधुनिक विकास आवश्यकताओं के अनुरूप पुनर्संरेखित करने का अवसर प्रदान करती हैं—बशर्ते कि उनका कार्यान्वयन **विचारपूर्ण, समावेशी और परामर्श-आधारित** हो।

How to use it

नए श्रम संहिता भारत के श्रम नियमन ढाँचे में एक मौलिक परिवर्तन को दर्शाती हैं। पहले का जटिल, खंडित और कठोर कानूनों वाला ढाँचा अब एकीकृत, लचीले और औपचारिकतावर्धक मॉडल की ओर बदल रहा है। मुख्य चुनौती यह है कि व्यवसाय की सुगमता और श्रमिकों की गरिमा, सुरक्षा तथा अधिकारों के बीच संतुलन स्थापित हो — खासकर ऐसे समय में जब गिग अर्थव्यवस्था और भविष्य के काम की प्रकृति तेजी से परिवर्तित हो रही है।

मुख्य प्रासंगिकता : GS Paper II (शासन, राजनीति, सामाजिक न्याय)

1. शासन एवं नीति-हस्तक्षेप

कैसे उपयोग करें: श्रम संहिताओं को एक बड़े नीतिगत हस्तक्षेप के रूप में समझाएँ।

मुख्य बिंदु:
– 29 पुराने कानूनों का 4 संहिताओं में एकीकरण अनुपालन बोझ कम करने, निवेश आकर्षित करने और अर्थव्यवस्था के औपचारिककरण को बढ़ावा देने का उद्देश्य रखता है।
– यह दशकों से चले आ रहे पुराने श्रम कानूनों के प्रति आलोचनाओं का संस्थागत उत्तर है।
– कार्यान्वयन की चुनौती यह है कि संहिताएँ तभी लागू होंगी जब केंद्र और राज्य दोनों अपने नियमों की अधिसूचना जारी करें। यह सहकारी संघवाद की जटिलताओं को स्पष्ट करता है।

---

2. विकास प्रक्रियाएँ एवं परामर्श की भूमिका

कैसे उपयोग करें: नीति-निर्माण में त्रिपक्षीय परामर्श की आवश्यकता को दर्शाएँ।

मुख्य बिंदु:
– 2015 के बाद से भारतीय श्रम सम्मेलन (ILC) की बैठक न होना नीति-निर्माण में लोकतांत्रिक कमी को दर्शाता है।
– सरकार, नियोक्ता और श्रमिक — इन तीनों के बीच सहमति न बनने से विश्वास-घाटा, विरोध और वैधता का संकट उत्पन्न हुआ है।

---

3. कमजोर वर्गों के लिए कल्याणकारी दृष्टिकोण

कैसे उपयोग करें: सामाजिक न्याय के परिप्रेक्ष्य से श्रम संहिताओं की पड़ताल करें।

मुख्य बिंदु:
– संहिताएँ सामाजिक सुरक्षा कवरेज को असंगठित श्रमिकों, गिग व प्लेटफ़ॉर्म वर्कर्स तथा घरेलू श्रमिकों तक विस्तार देने का उद्देश्य रखती हैं।
– आलोचना के अनुसार, छंटनी की सीमा बढ़ाने और सामूहिक सौदेबाज़ी की शक्ति घटाने से श्रमिक सुरक्षा कमजोर हो सकती है तथा संतुलन नियोक्ता-पक्ष की ओर झुक सकता है।

MENTORA IAS "YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

मुख्य प्रासंगिकता : GS Paper III (अर्थव्यवस्था)

1. रोजगार, वृद्धि और योजना

कैसे उपयोग करें: श्रम संहिताओं को रोजगार सृजन और विकास से जोड़ें।

मुख्य बिंदु:
– भारत को 2030 तक हर वर्ष लगभग 78.5 लाख गैर-कृषि नौकरियाँ सृजित करनी होंगी।
– संहिताएँ श्रम बाज़ार को अधिक लचीला बनाकर विनिर्माण और सेवा क्षेत्र में रोजगार-सृजन को प्रोत्साहित कर सकती हैं।
– सरलीकृत कानून अधिक उद्यमों और श्रमिकों को औपचारिक क्षेत्र में लाकर कराधार और सामाजिक सुरक्षा दोनों को बढ़ा सकते हैं।

---

2. उदारीकरण और औद्योगिक नीति

कैसे उपयोग करें: सुधारों को उदारीकरण की निरंतर प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करें।

मुख्य बिंदु:
– ये संहिताएँ भारत की औद्योगिक प्रतिस्पर्धा को बढ़ाने का हिस्सा हैं।
– श्रम बाज़ार की कठोरता कम करना औद्योगिक विकास के लिए प्रमुख सुधारों में गिना जा रहा है।

GS Paper IV : नैतिकता, सत्यनिष्ठा एवं अभिरुचि

1. शासन में नैतिकता

ILC की मीटिंग न बुलाना शासन की पारदर्शिता और परामर्श-आधारित नीति-निर्माण पर प्रश्न उठाता है।

2. हितों का टकराव

नियोक्ताओं की लचीलेपन की मांग और श्रमिकों की सुरक्षा की आवश्यकता — दोनों के बीच संतुलन बनाना एक नैतिक चुनौती है।

3. सहानुभूति

एक सिविल सेवक को ट्रेड यूनियनों, असंगठित श्रमिकों, गिग व प्लेटफ़ॉर्म वर्कर्स समेत सभी हितधारकों की चिंताओं को समझकर संवेदनशील तरीके से नीति लागू करनी चाहिए।

मेलघाट के आदिवासी-बहुल क्षेत्रों में शिशु मृत्यु की निरंतरता को समझना

परिचय

महाराष्ट्र के अमरावती ज़िले का कोरकू-बहुल मेलघाट क्षेत्र तीन दशकों से हस्तक्षेपों के बावजूद कुपोषण जनित शिशु मृत्यु का सामना कर रहा है। यह स्थिति स्वास्थ्य सेवाओं, पोषण प्रशासन और आदिवासी विकास से जुड़ी गहरी संरचनात्मक विफलताओं को उजागर करती है।

MENTORA "YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

न्यायिक हस्तक्षेप और वर्तमान संकट

12 नवंबर को बॉम्बे हाई कोर्ट ने महाराष्ट्र एवं केंद्र सरकार की "बेहद लापरवाह" कार्यप्रणाली की कठोर आलोचना की।

याचिकाकर्ता के दावों (जून 2025) के अनुसार:

0–6 महीने के 65 शिशुओं की कुपोषण से मृत्यु हुई।

220 से अधिक बच्चे गंभीर तीव्र कुपोषण (SAM) श्रेणी में हैं।

लगभग 50% SAM बच्चों की मृत्यु का जोखिम अत्यंत उच्च है यदि तत्काल उपचार न मिले।

यह न्यायिक हस्तक्षेप क्षेत्र में स्वास्थ्य विफलताओं की चिंताजनक निरंतरता की ओर संकेत करता है।

ऐतिहासिक संदर्भ

पिछले 30 वर्षों से मेलघाट शिशु एवं मातृ मृत्यु और कुपोषण का प्रमुख क्षेत्र रहा है।

कोरकू आदिवासी समुदाय लगातार वंचना, सेवाओं की कमजोर पहुँच और सामाजिक हाशिए पर होने के कारण सबसे अधिक प्रभावित है।

कई सरकारी प्रयासों के बावजूद संरचनात्मक समस्याएँ जस की तस बनी हुई हैं।

1. आधिकारिक आँकड़े और सरकारी प्रतिक्रिया

   अमरावती ज़िला परिषद के आँकड़े:

   अप्रैल 2024 – मार्च 2025: 96 शिशु मृत्यु

   पिछले 7 महीनों में: 61 बच्चों की मृत्यु

सरकार के स्पष्टीकरण:

रक्ताल्पता (एनीमिया)

सिकल सेल रोग

न्यूमोनिया

खराब सड़क संपर्क के कारण इलाज में देरी

सरकारी पहल:

मेलघाट में गर्म पका भोजन

बच्चों को सप्ताह में चार बार अंडे और केले

हर ग्राम पंचायत में Village Child Development Centres (VCDCs)

इन सबके बावजूद परिणाम कमजोर हैं क्योंकि संरचनात्मक व समन्वय संबंधी बाधाएँ बनी हुई हैं।

व्यापक राज्य-स्तरीय संदर्भ

महाराष्ट्र में बाल पोषण संकेतक चिंताजनक हैं:

5 वर्ष से कम उम्र के 35% बच्चे ठिगने (stunted)

35% बच्चे कम वज़न वाले

राज्य में कई पोषण कार्यक्रम चल रहे हैं, लेकिन क्रियान्वयन अंतराल असर को कमजोर कर देते हैं।

प्रमुख चुनौतियाँ

A. अवसंरचना संबंधी कमी

सड़क संपर्क का अभाव → अस्पताल तक देर से पहुँचना

बिजली की अनियमितता

अपर्याप्त व गैर-कार्यात्मक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र

B. शासन एवं समन्वय समस्याएँ

कई विभाग अलग-अलग साइलो में काम करते हैं

पोषण सप्लीमेंट की अनियमित आपूर्ति

कमज़ोर निगरानी व विभागीय समन्वय की कमी

C. स्वास्थ्यकर्मियों की भारी कमी

बाल रोग विशेषज्ञ, स्त्रीरोग विशेषज्ञ, प्रशिक्षित स्टाफ की कमी

लुभावने प्रोत्साहन के बावजूद डॉक्टरों को बनाए रखना कठिन

दूरस्थ क्षेत्रों में अनुपस्थिति (absenteeism) अधिक

D. स्वास्थ्य संकेतक

IMR (शिशु मृत्यु दर), मेलघाट: 16.5

महाराष्ट्र का औसत IMR (2024–25): 15

पीढ़ीगत कुपोषण चक्र (intergenerational cycle) जारी है।

E. पीढ़ीगत कुपोषण

कई आदिवासी महिलाएँ गर्भावस्था से पहले ही: कम वज़नी , रक्ताल्पता से पीड़ित , परिणाम: कम वज़न वाले शिशु, कमजोर प्रतिरक्षा, और शुरुआती बचपन की बीमारियों की उच्च संवेदनशीलता।

विशेषज्ञों द्वारा सुझाए गए दीर्घकालिक समाधान

केवल खाद्यान्न वितरण से आगे बढ़ें

कुपोषण का कारण बहु-आयामी है; सिर्फ भोजन देना पर्याप्त नहीं।

मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत करें

मजबूत और टिकाऊ स्वास्थ्य तंत्र तैयार करें जो मातृ पोषण, शिशु देखभाल, जल्दी पहचान और उपचार पर केंद्रित हो।

कुशल सामुदायिक स्वास्थ्य कर्मी

आदिवासी स्वास्थ्य की चुनौतियों से परिचित एक प्रशिक्षित ASHA कैडर तैयार करें।

समेकित स्वास्थ्य–पोषण दृष्टिकोण

एनीमिया व सिकल सेल जैसी बीमारियों का: स्क्रीनिंग , शुरुआती उपचार, पोषण परामर्श के माध्यम से समाधान किया जाए।

व्यवहार परिवर्तन व समुदाय सहभागिता

स्तनपान पूरक आहार स्वच्छता और स्वास्थ्य आदतों के प्रति जागरूकता बढ़ाएँ।

नागरिक व स्वास्थ्य अवसंरचना का सुधार

बेहतर सड़कें, बिजली, कार्यात्मक PHCs, त्वरित रेफरल परिवहन सेवाएँ आवश्यक हैं।

सार

मेलघाट में शिशु मृत्यु की निरंतरता नीतिगत और संरचनात्मक विफलता का स्पष्ट संकेत है।
मुख्य समस्याएँ हैं: कमजोर अवसंरचना, स्टाफ की कमी, विभागीय असमन्वय, और पीढ़ीगत कुपोषण।
एक व्यापक रणनीति आवश्यक है जो स्वास्थ्य, पोषण, अवसंरचना और समुदाय-आधारित व्यवहार परिवर्तन को जोड़कर स्थायी समाधान प्रदान करे।

How to use it

मेलघाट की स्थिति कोई अचानक आई आपदा नहीं, बल्कि शासन और सामाजिक बहिष्करण से उपजी एक पुरानी, मानव-निर्मित त्रासदी है। यह संविधान द्वारा दिए गए मूल अधिकार—जीवन, स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा—की पूर्ति में राज्य की गहरी विफलता को उजागर करती है, विशेषकर उन आदिवासी समुदायों के संदर्भ में जो ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर रहे हैं। यह नीति-निर्माण और जमीनी क्रियान्वयन के बीच मौजूद विशाल अंतर को भी स्पष्ट करती है।

प्राथमिक प्रासंगिकता: GS Paper II (शासन, सामाजिक न्याय, स्वास्थ्य)

1. **कमजोर वर्गों के लिए केंद्र और राज्य सरकारों की कल्याणकारी योजनाएँ एवं उनका प्रदर्शन**

कैसे उपयोग करें: यह विश्लेषण का मुख्य आधार है। मेलघाट कई कल्याणकारी योजनाओं की विफलता का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

मुख्य बिंदु:

1. **क्रियान्वयन की विफलता:** गर्म पका भोजन, VCDC, अंडे आदि योजनाओं के बावजूद शिशु मृत्यु जारी है। यह बताता है कि कमी योजनाओं की नहीं, बल्कि अंतिम स्तर तक पहुँच, निगरानी, समन्वय और जवाबदेही की है।
2. **समन्वय का अभाव:** स्वास्थ्य, महिला एवं बाल विकास, आदिवासी विकास—सभी विभाग अलग-अलग "साइलो" में काम करते हैं। किसी एक विभाग पर स्पष्ट जवाबदेही नहीं है, परिणामस्वरूप संसाधन बिखर जाते हैं और प्रभाव घट जाता है।
3. **न्यायिक सक्रियता:** बॉम्बे हाई कोर्ट की सरकार को "बेहद लापरवाह" कहकर की गई आलोचना यह दर्शाती है कि कार्यपालिका असफल रही और न्यायपालिका को हस्तक्षेप करना पड़ा।
4. **कमजोर वर्गों के संरक्षण एवं उत्थान हेतु बनाए गए तंत्र, कानून एवं संस्थाएँ**

MENTORA IAS
YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT

कैसे उपयोग करें: अनुसूचित जनजातियों के लिए संस्थागत संरचनाओं की भूमिका का मूल्यांकन करें।

मुख्य बिंदु:

1. **संरक्षात्मक कानूनों की विफलता:** वनाधिकार अधिनियम (FRA 2006), पेसा अधिनियम (1996) जैसे अधिकार आधारित कानून आदिवासियों को सशक्त करने के लिए बने थे। मेलघाट का संकट बताता है कि इन कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हुआ।
2. **राष्ट्रीय आयोगों की भूमिका पर प्रश्न:** राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (NCST) जैसी संस्थाओं की सक्रियता और प्रभावशीलता पर सवाल उठते हैं क्योंकि ऐसी दीर्घकालिक त्रासदियों पर सशक्त हस्तक्षेप नहीं दिखाई देता।

प्राथमिक प्रासंगिकता: GS Paper I (भारतीय समाज एवं सामाजिक न्याय)

1. **भारतीय समाज की प्रमुख विशेषताएँ, विविधता**

कैसे उपयोग करें: सामाजिक-सांस्कृतिक पक्ष का विश्लेषण करें।

मुख्य बिंदु:

1. **सामाजिक हाशिए पर होना:** यह संकट कोरकू जनजाति (PVTG) को सबसे अधिक प्रभावित करता है। यह सामाजिक पदानुक्रम, भौगोलिक अलगाव और ऐतिहासिक वंचना के स्वास्थ्य पर सीधे प्रभाव को दर्शाता है।
2. **गरीबी और वंचना:** लेख "chronic deprivation" की बात करता है, जो गरीबी, असमानता और सामाजिक सुरक्षा तक पहुँच की कमी से जुड़ा है।
3. **महिलाओं की भूमिका, जनसंख्या मुद्दे, गरीबी एवं विकास से संबंधित प्रश्न**

कैसे उपयोग करें: लिंग आयाम और पीढ़ीगत कुपोषण पर ध्यान केंद्रित करें।

मुख्य बिंदु:

1. **पीढ़ीगत कुपोषण का चक्र:** कम वज़न और एनीमिक महिलाएँ → कम जन्म वजन वाले बच्चे → कुपोषण और बीमारी का उच्च जोखिम।
   इस चक्र को तोड़ने के लिए किशोरियों और गर्भवती महिलाओं के पोषण पर केंद्रित हस्तक्षेप अनिवार्य है।

GS Paper III (आपदा प्रबंधन, अर्थव्यवस्था से जुड़ाव)

1. **आपदा और आपदा प्रबंधन**

कैसे उपयोग करें: इसे "धीमी-गति वाली आपदा" (slow-onset disaster) के रूप में प्रस्तुत करें।

मुख्य बिंदु:
यह भूकंप या बाढ़ जैसी तत्काल आपदा नहीं, बल्कि दशकों की उपेक्षा से उपजी "रेंगती हुई आपदा" है। इसका समाधान केवल स्वास्थ्य-सेवा आधारित प्रतिक्रियात्मक मॉडल नहीं, बल्कि रोकथाम, तैयारी और प्रारंभिक हस्तक्षेप के ढाँचे में होना चाहिए।

2. **योजनाओं, संसाधनों के नियोजन एवं जुटाव से संबंधित मुद्दे**

कैसे उपयोग करें: योजना और मानव संसाधन प्रबंधन की आलोचनात्मक समीक्षा करें।

मुख्य बिंदु:

1. **स्थानिक नियोजन की विफलता:** स्वास्थ्य सेवाएँ, सड़कें, बिजली जैसे मूलभूत ढाँचे दूरस्थ आदिवासी क्षेत्रों तक नहीं पहुँच पाए।
2. **मानव संसाधन प्रबंधन की कमी:** वित्तीय प्रोत्साहनों के बावजूद डॉक्टरों का दूरस्थ इलाकों में न बने रहना बताता है कि योजना, पोस्टिंग नीति और निगरानी में गंभीर कमियाँ हैं।

सुप्रीम कोर्ट का राज्य विधेयकों पर राज्यपाल की शक्तियों संबंधी परामर्शात्मक मत

---

1. परिचय

अनुच्छेद 143 के तहत सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिया गया हालिया परामर्शात्मक मत राज्य विधेयकों पर राज्यपाल के अधिकारों और सीमाओं की संवैधानिक व्याख्या को पुनः स्पष्ट करता है। इसकी आवश्यकता अप्रैल 2025 के *State of Tamil Nadu vs Governor of Tamil Nadu* मामले के बाद उत्पन्न विवादों के कारण हुई, जिसमें तीन महीने की समयसीमा और *"माना गया अनुमोदन"* (deemed assent) की अवधारणा पेश की गई थी—जिससे संवैधानिक अस्पष्टता पैदा हुई।

---

2. मामला कैसे उत्पन्न हुआ? (पृष्ठभूमि)

भारत के राष्ट्रपति ने अनुच्छेद 143 के तहत अनुच्छेद 200 और 201 की व्याख्या को लेकर सुप्रीम कोर्ट से परामर्श माँगा। यह अप्रैल 2025 के निर्णय के बाद आवश्यक हुआ, जिसमें:

- राज्यपाल/राष्ट्रपति द्वारा विधेयक पर निर्णय हेतु तीन महीने की समय-सीमा तय की गई
- अनुच्छेद 142 के तहत लंबित विधेयकों के लिए *"माना गया अनुमोदन"* घोषित किया गया

केंद्र सरकार ने इन निर्देशों को संवैधानिक योजना में बदलाव के रूप में देखा, जिससे यह संदर्भ पैदा हुआ।

---

3. सुप्रीम कोर्ट से पूछे गए संवैधानिक प्रश्न

A. अनुच्छेद 200 और 201 की व्याख्या

MENTORA IAS "YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

- क्या राज्यपाल केवल मंत्रिपरिषद की सलाह पर कार्य करने को बाध्य हैं?
- किन परिस्थितियों में वे विधेयक को वापस भेज सकते हैं या राष्ट्रपति के पास भेज सकते हैं?

B. समयसीमा तय करने का न्यायिक अधिकार

- क्या न्यायालय वहाँ समयसीमा लगा सकता है जहाँ संविधान मौन है?

C. न्यायिक समीक्षा (Justiciability)

- क्या विधेयक के कानून बनने से पूर्व राज्यपाल/राष्ट्रपति की कार्यवाही की न्यायिक समीक्षा हो सकती है?

D. अनुच्छेद 142 का दायरा

- क्या न्यायालय *"deemed assent"* जैसा संवैधानिक प्रावधान निर्मित कर सकता है?

---

4. सुप्रीम कोर्ट का परामर्शात्मक मत — मुख्य निष्कर्ष

4.1 अनुच्छेद 200 के तहत राज्यपाल के विकल्प

राज्यपाल के पास तीन विकल्प हैं:

- अनुमोदन देना
- राष्ट्रपति की मंजूरी हेतु आरक्षित करना
- विधेयक लौटाना (धन विधेयकों को छोड़कर)

4.2 राज्यपाल का विवेकाधिकार

- राज्यपाल इन तीन विकल्पों में से किसी का चयन करते समय मंत्रिपरिषद की सलाह से बाध्य नहीं हैं।
- यह विवेकाधिकार संविधान में ही निहित है।

4.3 न्यायिक समीक्षा

- अनुच्छेद 200 के तहत राज्यपाल की कार्यवाही सामान्यतः गैर-न्यायिक (non-justiciable) है।
- हालांकि, अत्यधिक विलंब होने पर न्यायालय सीमित *mandamus* जारी कर सकता है।

4.4 समयसीमा

- न्यायालय संविधान में मौन स्थानों को भरते हुए समयसीमा निर्धारित नहीं कर सकता।
- तीन महीने की समयसीमा असंवैधानिक घोषित की गई।

4.5 पूर्व-विधायी समीक्षा

- विधेयक कानून बनने से पहले न्यायालय राज्यपाल/राष्ट्रपति की कार्यवाही की समीक्षा नहीं कर सकता।

MENTORA IAS
"YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

4.6 अनुच्छेद 142

- अनुच्छेद 142 के तहत न्यायालय संवैधानिक प्रक्रियाओं को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता।
- *"Deemed assent"* असंवैधानिक है।

---

5. ऐतिहासिक संदर्भ और भिन्न मत

5.1 सरकारिया आयोग (1987)

- केवल राष्ट्रपति हेतु विधेयक आरक्षित करना ही विवेकाधिकार माना—वह भी अत्यंत सीमित।

5.2 पूर्व सुप्रीम कोर्ट निर्णय

- *Shamsher Singh (1974)* और *Rameshwar Prasad (2006)*: राज्यपाल सामान्यतः मंत्रिपरिषद की सलाह पर कार्य करते हैं।

5.3 पंची आयोग (2010)

- विधेयक पर राज्यपाल के निर्णय हेतु समयसीमा निश्चित करने की अनुशंसा।

इन ऐतिहासिक सिफारिशों के विपरीत, परामर्शात्मक मत विवेकाधिकार को विस्तृत रूप में स्वीकार करता है।

---

6. प्रमुख चिंताएँ और प्रभाव

A. राज्य विधानसभाओं पर प्रभाव

विवेकाधिकार में वृद्धि विधेयकों को लंबित रखकर चुनी हुई सरकार के विधायी कार्यक्रम को बाधित कर सकती है।

B. विधायी संघवाद का कमजोर होना

- केंद्रीय नियुक्त राज्यपाल की शक्तियाँ बढ़ना
- राज्य सरकार की जवाबदेही कम होना
- संघवाद के बुनियादी ढाँचे को चुनौती

C. न्यायिक सुधारात्मक प्रयासों की सीमा

समयसीमा और *"deemed assent"* जैसी व्यावहारिक सुधारात्मक कोशिशें अस्वीकार।

D. संवैधानिक टकराव की संभावना

विपक्ष-शासित राज्यों में राज्यपाल–सरकार संघर्ष बढ़ सकता है।

---

7. आगे का मार्ग (Way Forward)

1. **उत्तरदायी संवैधानिक आचरण**
   राज्यपाल को लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व समझते हुए विधेयकों पर शीघ्र निर्णय देना चाहिए।

2. **संघवाद का सम्मान**
   राज्यपाल को राजनीतिक वीटो के रूप में नहीं, बल्कि संवैधानिक संरक्षक के रूप में कार्य करना चाहिए।

3. **संवैधानिक परंपराओं का सुदृढ़ीकरण**
   समयसीमा हेतु दिशा-निर्देशों/आचार संहिताओं का निर्माण।

4. **सहकारी संघवाद**
   केंद्र–राज्य–राज्यपाल त्रिकोणीय संवाद को संस्थागत बनाना।

---

8. THE GIST (UPSC वैल्यू एडेड सार)

- तीन महीने की समयसीमा और *"deemed assent"* वाले निर्णय के बाद अनुच्छेद 143 के तहत यह संदर्भ लाया गया।
- सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि राज्यपाल को अनुच्छेद 200/201 के तहत विवेकाधिकार प्राप्त है।
- न्यायालय समयसीमा तय नहीं कर सकता और न ही *deemed assent* जैसी अवधारणा बना सकता है।
- यह निर्णय राज्य सरकारों और राज्यपालों के बीच शक्ति संतुलन एवं संघवाद पर गंभीर प्रभाव डालता है।

How to use it

यह परामर्शात्मक मत भारत में **शक्तियों के पृथक्करण** और **संघीय गतिशीलता** के लिए एक **निर्णायक क्षण** का प्रतिनिधित्व करता है। यह विधायी प्रक्रिया में **राज्यपाल के विवेकाधिकार** को स्पष्ट रूप से स्थापित करता है और न्यायपालिका द्वारा **प्रक्रियात्मक समय-सीमाएँ** थोपने के प्रयासों को पीछे धकेलता है। इससे **संवैधानिक औपचारिकता** मजबूत होती है, लेकिन साथ ही **राज्यपाल के संभावित अतिक्रमण**, तथा विशेषकर **विपक्ष-शासित राज्यों** में **विधायी संघवाद** पर उसके प्रभाव की गंभीर चिंताएँ भी पैदा होती हैं।

प्रमुख प्रासंगिकता: **GS Paper II — राजव्यवस्था, संविधान, शासन**

1. भारतीय संविधान — **ऐतिहासिक आधार**, **विकास**, **विशेषताएँ**, **संशोधन**, **महत्वपूर्ण प्रावधान**, और **मूल संरचना**।

उपयोग का तरीका: यह विषय का कोर है। यह परामर्शात्मक मत संवैधानिक अनुच्छेदों की **समकालीन, आधिकारिक व्याख्या** प्रदान करता है।

मुख्य बिंदु:

अनुच्छेद **200** और **201** की व्याख्या: न्यायालय ने स्पष्ट किया कि राज्यपाल के पास तीन विकल्पों (मंज़ूरी, पुनर्विचार हेतु लौटाना, राष्ट्रपति के लिए आरक्षण) में से चुनने का अधिकार **संवैधानिक रूप से निहित विवेकाधिकार** है, जो मंत्रिपरिषद की सलाह से बाध्य नहीं है। इससे **लंबे समय से चली बहस** समाप्त हो गई।

मूल संरचना सिद्धांत: न्यायालय द्वारा समय-सीमा न निर्धारित करने का निर्णय

separation of powers के सिद्धांत पर आधारित है। "**कल्पित स्वीकृति**" जैसी अवधारणा बनाना न्यायपालिका का **कार्यपालिका क्षेत्र में दखल** माना गया।

अनुच्छेद **142** का दायरा: न्यायालय ने कहा कि इस प्रावधान का उपयोग **संवैधानिक प्रक्रियाओं को बदलने** के लिए नहीं किया जा सकता।

2. केंद्र एवं राज्यों के कार्य, दायित्व और संघीय ढाँचे की चुनौतियाँ।

उपयोग का तरीका: यह मत **भारतीय संघवाद** पर चल रही बहस का केंद्र है।

मुख्य बिंदु:

संघीय तनाव: यह मत केंद्र द्वारा नियुक्त राज्यपाल की शक्ति को मजबूत करता है, जिससे **राज्य सरकारों के विधायी अधिकारों पर प्रभाव** पड़ सकता है।

विधायी गतिरोध: समय-सीमा न होने पर राज्यपाल किसी विधेयक को **अनिश्चितकाल तक लंबित** रख सकते हैं। यह **pocket veto** जैसी स्थिति पैदा कर सकता है।

आयोगों से विचलन: सरकारिया और पुनची आयोग द्वारा समय-सीमा लागू करने और विवेकाधिकार के सीमित उपयोग की सिफारिशों से यह मत अलग है। यह **विशेषज्ञ सलाह और न्यायिक दृष्टिकोण** के बीच अंतर को दर्शाता है।

3. विभिन्न अंगों के बीच **शक्तियों का पृथक्करण**, विवाद-निवारण संस्थाएँ।

उपयोग का तरीका: यह मामला **संस्थागत सीमाएँ तय करने** का उत्कृष्ट उदाहरण है।

मुख्य बिंदु:

न्यायिक संयम बनाम न्यायिक सक्रियता: न्यायालय ने कहा कि जहाँ संविधान मौन है, वहाँ न्यायपालिका समय-सीमा तय नहीं कर सकती। यह **judicial restraint** का उदाहरण है।

कार्यपालिका का क्षेत्राधिकार: राज्यपाल की कार्रवाई को "pre-enactment" माना गया, जो सामान्यतः **न्यायिक समीक्षा से बाहर** है, सिवाय अत्यधिक और अनुचित देरी के।

4. विभिन्न **संवैधानिक पद**, उनके **अधिकार**, **कार्य** और **जिम्मेदारियाँ**।

उपयोग का तरीका: राज्यपाल की पुनर्परिभाषित भूमिका को समझने के लिए।

मुख्य बिंदु:

यह परामर्शात्मक मत राज्यपाल की भूमिका को केवल औपचारिक न मानकर उसे **विधायी प्रक्रिया में वास्तविक, प्रभावशाली और विवेकाधिकार-संपन्न** पद के रूप में स्थापित करता है।

राज्यपालीय विवेकाधिकार का विस्तार: सुप्रीम कोर्ट के परामर्शात्मक मत का विश्लेषण

प्रस्तावना

अनुच्छेद 143 के तहत सुप्रीम कोर्ट का हालिया परामर्शात्मक मत केंद्र–राज्य संवैधानिक संबंधों में एक महत्वपूर्ण मोड़ का प्रतिनिधित्व करता है। राष्ट्रपति द्वारा भेजे गए 14 में से 11 प्रश्नों पर विचार करते हुए न्यायालय ने अनुच्छेद 200 के तहत राज्यपाल के विधेयकों पर स्वीकृति से जुड़े **विवेकाधिकार की सीमाओं** की व्याख्या की। सात से अधिक दशकों की संवैधानिक प्रथा—और बढ़ते राजनीतिक तनाव—के बीच यह मत राज्यपाल की शक्तियों को स्पष्ट करता है, पर साथ ही **विधायी संघवाद के भविष्य** को लेकर चिंताएँ भी उत्पन्न करता है।

---

1. पृष्ठभूमि और संदर्भ

यह संदर्भ राज्य सरकारों और राज्यपालों के बीच विधेयकों को लेकर लगातार चल रहे टकराव से उत्पन्न हुआ।

मुख्य प्रश्न:
क्या राज्यपाल विधेयकों पर:

• स्वीकृति देने,
• स्वीकृति रोकने,
• राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित करने,
में विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकते हैं?

अनुच्छेद 200 और 201 की अस्पष्टताओं के कारण बढ़ती याचिकाओं ने राष्ट्रपति संदर्भ की आवश्यकता उत्पन्न की।

---

2. सुप्रीम कोर्ट द्वारा संबोधित मुख्य संवैधानिक प्रश्न

न्यायालय ने मूल्यांकन किया कि क्या विवेकाधिकार मौजूद है:

• विधेयक को स्वीकृति देने में
• स्वीकृति रोकने में
• विधेयक को राष्ट्रपति के लिए आरक्षित करने में
• राज्यपाल/राष्ट्रपति के निर्णय की समय-सीमा में

ये प्रश्न **विधायी संप्रभुता** और **संघीय संतुलन** के मूल में हैं।

---

3. सुप्रीम कोर्ट के प्रमुख निष्कर्ष

a. विवेकाधिकार की सीमा

न्यायालय ने कहा कि राज्यपाल:

• स्वीकृति दे सकते हैं
• स्वीकृति रोक सकते हैं
• विधेयक वापस भेज सकते हैं
• इसे राष्ट्रपति के लिए आरक्षित कर सकते हैं

अर्थात अनुच्छेद 200 में **सीमित विवेकाधिकार** निहित है।

b. न्यायालय द्वारा समय-सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती

न्यायालय ने कहा:

• राज्यपाल/राष्ट्रपति पर कोई **कट्टरपंथी समय-सीमा** नहीं लगाई जा सकती।

• परंतु कार्य "**उचित समय**" में होना चाहिए, विशेषकर जब विधेयक दोबारा पारित होकर भेजा जाए।

c. न्यायिक समीक्षा

न्यायिक समीक्षा केवल परिस्थितियों में संभव:

• अत्यधिक विलंब
• बिना कारण लंबा पड़ा रहना
• अनिश्चितकालीन स्वीकृति-निरोध

यह एक **संकीर्ण संवैधानिक नियंत्रण** प्रदान करता है।

d. पुनः प्रस्तुत विधेयक

यदि विधेयक वापस भेजने के बाद पुनः पारित हो जाए, तो राज्यपाल को **"यथाशीघ्र"** निर्णय करना होगा—यह विवेकाधिकार को सीमित करता है।

---

4. ऐतिहासिक और संवैधानिक विकास

a. संविधान-पूर्व संदर्भ

1935 के भारत सरकार अधिनियम में राज्यपालों को व्यापक विवेकाधिकार दिए गए थे।

संविधान सभा ने इन विवेकाधिकारों को हटाकर **जिम्मेदार शासन** सुनिश्चित किया।

b. दल-बदल कानून की पृष्ठभूमि

न्यायालय ने माना कि 1985 के बाद (दसवीं अनुसूची) मंत्रिपरिषद की सलाह और भी शक्तिशाली हो गई।

परंतु यह मान्यता आलोचना का विषय है—यह मान लेना कि मंत्रिपरिषद हमेशा एकमत होगी, वास्तविक राजनीति से मेल नहीं खाता।

---

5. न्यायालय की युक्ति का समालोचनात्मक विश्लेषण

a. प्रश्नगत धारणाएँ

कोएलिशन सरकारें, दलों में विभाजन, या अल्पमत सरकारें—ये सभी परिस्थितियाँ मंत्रिपरिषद द्वारा विधेयक वापस भेजने की सलाह को उचित बना सकती हैं।

इसलिए मंत्रिपरिषद की "पूर्ण एकजुटता" एक अव्यावहारिक धारणा है।

b. ऐतिहासिक और विशेषज्ञ दृष्टिकोण

• बी.एन. राव ने विशिष्ट परिस्थितियों में राज्यपालीय हस्तक्षेप की कल्पना की थी।

• सरकारिया आयोग ने राज्यपाल विवेकाधिकार को "संकीर्ण" रखने की सलाह दी थी।

न्यायालय की व्याख्या इन स्थापित परंपराओं से व्यापक प्रतीत होती है।

---

6. बढ़े हुए विवेकाधिकार को लेकर चिंताएँ

a. “राज्यपाल शासन” का उभार

अनिर्धारित विवेकाधिकार और बिना समय-सीमा के यह जोखिम बनता है कि राज्यपाल:

- विधेयकों को विलंबित करें
- विधायी एजेंडा अवरुद्ध करें
- राजनीतिक परिणामों को प्रभावित करें

b. गैर-न्यायिक क्षेत्र

समय-सीमाएँ लागू न होने से यह क्षेत्र **व्यक्तिगत राज्यपाल के आचरण** पर निर्भर हो जाएगा।

c. संघीय तनाव

केंद्र और राज्य में अलग-अलग दलों की सरकार होने पर तनाव और बढ़ेगा, क्योंकि:

- राज्यपाल राजनीतिक नियुक्तियाँ होते हैं
- कई बार यह “सेवानिवृत्ति के बाद का पद” या **राजनीतिक समायोजन** माना जाता है

---

7. विलंब के ऐतिहासिक उदाहरण

- 1988: राष्ट्रपति के पास 74 विधेयक लंबित—कुछ 7 वर्षों तक निर्णय नहीं हुआ।
- कर्नाटक शिक्षा विधेयक (1983): 6 वर्षों तक कोई निर्णय नहीं।

विशेषज्ञ आयोग—सरकारिया, वेंकटरमण, पंची—ने **समय-सीमा** का कड़ा समर्थन किया।

ये उदाहरण संभावित दुरुपयोग की आशंका को पुष्ट करते हैं।

---

8. आगे का मार्ग

a. संवैधानिक संशोधन

अनुच्छेद 200 और 201 में स्पष्ट समय-सीमाएँ जोड़ने पर गंभीरता से विचार होना चाहिए—इसी तरह जैसे अनुच्छेद 111 में राष्ट्रपति के लिए प्रक्रिया स्पष्ट है।

b. राजनीतिक सहमति का निर्माण

चूँकि सभी दल समय-समय पर केंद्र और राज्यों में सत्ता में आते हैं, इसलिए **दलीय-सहमति** संभव है और आवश्यक भी।

c. संवैधानिक परंपराओं का स्पष्टिकरण

परंपराओं को **विधायी या औपचारिक दिशा-निर्देशों** द्वारा स्पष्ट करना अस्पष्टताओं को कम कर सकता है।

निष्कर्ष

सुप्रीम कोर्ट का यह परामर्शात्मक मत **राज्यपाल के विवेकाधिकार की सीमा को विस्तृत** करता है—जो न केवल विभिन्न आयोगों की सावधानीपूर्ण सिफारिशों से अलग है बल्कि संविधान की मूल भावना से भी कुछ हद तक विचलित प्रतीत होता है।
विशेष रूप से, समय-सीमा न होने से यह जोखिम बढ़ता है कि गवर्नर का कार्यालय **विधायी प्रक्रिया को प्रभावित करने का उपकरण**

बन सकता है, जिससे केंद्र–राज्य संबंधों में तनाव बढ़ेगा।

अंततः, स्पष्ट समय-सीमाओं का प्रावधान और संवैधानिक परंपराओं का औपचारिककरण आवश्यक होगा ताकि विवेकाधिकार **सहकारी संघवाद को मजबूत** करे—न कि उसे विचलित।

How to use it

यह **advisory opinion** भारत में **शक्तियों के विभाजन (separation of powers)** और **संघीय व्यवस्था (federal dynamics)** के लिए एक निर्णायक क्षण है। यह स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि **राज्यपाल की विधायी प्रक्रिया में विवेकाधीन शक्ति** स्वतंत्र है और उस पर न्यायपालिका कोई अनिवार्य समयसीमा लागू नहीं कर सकती। यह निर्णय **संवैधानिक औपचारिकता (constitutional formalism)** को मज़बूत करता है, लेकिन साथ ही यह चिंता भी बढ़ाता है कि कहीं इससे **राज्यपाल की अति-हस्तक्षेपकारी भूमिका** न उभरे, विशेषकर उन राज्यों में जहाँ **विपक्ष की सरकारें** हैं।

मुख्य प्रासंगिकता: GS Paper II (Polity, Constitution, Governance)

1. **भारतीय संविधान — ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, विकास, विशेषताएँ, संशोधन, महत्वपूर्ण प्रावधान और मूल संरचना**

कैसे उपयोग करें:

यह पूरे विषय का आधार है। यह राय (advisory opinion) प्रमुख संवैधानिक अनुच्छेदों की आधुनिक और निर्णायक व्याख्या प्रदान करती है।

मुख्य बिंदु:

अनुच्छेद 200 व 201 की व्याख्या:
न्यायालय ने स्पष्ट किया कि राज्यपाल के पास **तीन विकल्पों** (स्वीकृति, आरक्षण, पुनर्विचारण हेतु वापसी) में से किसी का भी चयन करने की **स्वतंत्र संवैधानिक शक्ति** है। वह मंत्रिपरिषद की सलाह से बाध्य नहीं हैं। यह एक पुरानी संवैधानिक बहस का समाधान है।

मूल संरचना सिद्धांत:
न्यायालय ने समयसीमा लगाने या "अभिनिर्धारित स्वीकृति" (deemed assent) का सिद्धांत विकसित करने से इनकार किया, इसे **न्यायिक अतिक्रमण (judicial overreach)** माना क्योंकि यह कार्यपालिका के क्षेत्र में हस्तक्षेप होता।

अनुच्छेद 142 का दायरा:
न्यायालय ने कहा कि **Article 142** का उपयोग संविधान में स्पष्ट रूप से निर्धारित प्रक्रियाओं, जैसे कि **assent mechanism**, को बदलने के लिए नहीं किया जा सकता।

2. **संघीय संरचना से संबंधित मुद्दे, संघ और राज्यों के कार्यक्षेत्र**

कैसे उपयोग करें:

यह इस राय से उत्पन्न संघवाद से जुड़ी बहस का केंद्रीय विषय है।

मुख्य बिंदु:

संघ–राज्य तनाव:

न्यायालय की राय से ऐसा प्रतीत होता है कि **केंद्र द्वारा नियुक्त राज्यपाल** की शक्ति **निर्वाचित राज्य सरकार** पर बढ़ रही है। यह संघीय संतुलन के लिए चुनौतीपूर्ण है।

विधायी अवरोध:

समयसीमा अस्वीकार कर देने से यह संभावना बनी रहती है कि राज्यपाल किसी विधेयक को **अनिश्चितकाल** तक रोके रख सकते हैं, जो एक प्रकार का **पॉकेट वीटो** बन जाता है।

सिफारिशों से विचलन:

यह निर्णय **सर्कारिया आयोग** और **पुँछी आयोग** की उन सिफारिशों से भिन्न है, जिनमें राज्यपाल द्वारा समयबद्ध निर्णय और विवेकाधिकार के न्यूनतम उपयोग की सलाह दी गई थी।

3. **विभिन्न अंगों के बीच शक्तियों का विभाजन, विवाद निवारण तंत्र**

कैसे उपयोग करें:

इस राय को संस्थागत सीमाओं की पुनर्परिभाषा के रूप में समझा जा सकता है।

मुख्य बिंदु:

न्यायिक संयम बनाम सक्रियता:

न्यायालय ने कहा कि राज्यपाल के लिए समयसीमा तय करना **न्यायपालिका का कार्य नहीं**, इसलिए स्वयं को रोकते हुए उन्होंने कोई नई प्रक्रिया निर्मित नहीं की।

कार्यपालिका का क्षेत्र:

न्यायालय ने स्पष्ट कहा कि **assent प्रक्रिया और उसकी गति** कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में है और यह सामान्यतः **न्यायिक समीक्षा योग्य नहीं** है, सिवाय "अत्यधिक और अकारण देरी" के मामलों में।

4. **संवैधानिक पदों पर नियुक्तियाँ, अधिकार, कार्य और शक्तियाँ**

कैसे उपयोग करें:

राज्यपाल के संवैधानिक स्थान को समझने के लिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण है।

मुख्य बिंदु:

यह राय राज्यपाल की भूमिका को **केवल औपचारिक पद** से आगे ले जाकर **महत्वपूर्ण और प्रभावी विधायी अधिकारों** वाला पद घोषित करती है, जिससे उनकी संवैधानिक प्रासंगिकता और शक्ति दोनों बढ़ती हैं।

समाज को सम्मानजनक और खुले संवाद को पुनः स्थापित करना होगा

भूमिका

लोकतांत्रिक समाज **गरिमापूर्ण असहमति** पर फलते-फूलते हैं। पर आज की सार्वजनिक बातचीत **कर्कश पक्षपात**, **भावनात्मक उकसावे**, और **मध्यमार्ग के क्षरण** से घिरी है। टीवी स्टूडियो से लेकर डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म तक, सार्थक बहस की जगह **ध्रुवीकृत प्रदर्शन** ले चुके हैं। सम्मानजनक संवाद को पुनर्स्थापित करना

केवल सामाजिक सद्भाव के लिए ही नहीं बल्कि **लोकतंत्र के स्वास्थ्य** के लिए भी आवश्यक है।

1. **सार्वजनिक संवाद का वर्तमान संकट**

a. **बहस का पतन**

विचारित विमर्श की जगह अब **टकरावपूर्ण बहस**, शोर-शराबा और जीतने की होड़ ने ले ली है, जहाँ **समझ और सहानुभूति** पीछे छूट जाते हैं।

b. **ध्रुवीकरण के मंच**

टीवी डिबेट्स, राजनीतिक सभाएँ और सोशल मीडिया **विचारधारात्मक युद्धभूमि** बन चुके हैं। इनके ढाँचे और प्रोत्साहन **गुस्सा, गति और अतिशयोक्ति** को बढ़ावा देते हैं।

c. **विभाजन के प्रेरक तत्व**

राजनीतिक या व्यावसायिक लाभ लेने वाले ध्रुवीकरण के व्यापारी

क्रोध को बढ़ाने के लिए डिजाइन किए गए डिजिटल एल्गोरिद्म

सामूहिक निष्ठाएँ जहाँ सत्य से अधिक अपनी टोली को प्राथमिकता मिलती है

तटस्थता के प्रति बढ़ती घृणा, जिसे अब कमजोरी के रूप में देखा जाता है

2. **मध्यमार्ग का गायब होना**

a. **थोपे गए द्वैत**

समाज को बाएँ-दाएँ, हमारे-उनके जैसे कठोर वर्गों में धकेला जा रहा है, जिससे **सूक्ष्मता और विवेक** के लिए स्थान नहीं बचता।

b. **निष्पक्षता का हाशिए पर जाना**

संतुलित निर्णय लेने वालों को अप्रासंगिक या अविश्वासी करार दिया जाता है, जिससे **संयम और तर्क** की जगह सिकुड़ती जा रही है।

c. **असहमति का दमन**

विपरीत विचारों से बहस करने के बजाय, समाज **उपहास, बहिष्कार और चरित्र-हनन** का सहारा ले रहा है।

d. **साहसी तटस्थता**

ऐसे माहौल में तटस्थ रहना, जो पहले **लोकतांत्रिक गुण** माना जाता था, आज **साहस का कार्य** बन गया है।

3. **निर्णय-निर्माताओं और मध्यस्थों पर प्रभाव**

a. **सार के ऊपर अस्तित्व**

प्रशासन, नीति-निर्माण, मध्यस्थता और पत्रकारिता में, संतुलित संवाद से अधिक महत्वपूर्ण **शत्रुतापूर्ण माहौल में जीवित रहना** हो गया है।

b. **विकृत दृष्टिकोण**

समझौता = विश्वासघात

चिंतन या आत्म-संदेह = कमजोरी

सूक्ष्म या जटिल विचार = भ्रम

c. **भावनात्मक परिणाम**

संवाद को प्राथमिकता देने वाले लोग **थकान, चिंता और आत्म-नियंत्रण** का अनुभव करते हैं, जिससे निष्पक्ष संस्थाएँ कमजोर होती हैं।

MENTORA IAS "YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

4. **तटस्थता का दुरुपयोग और दार्शनिक दृष्टि**

a. **चुनिंदा तटस्थता**

कई लोग तटस्थता का प्रयोग **चयनात्मक** रूप से करते हैं— प्रतिद्वंदियों की गलतियाँ उजागर करते हैं, पर अपनी टोली की अनदेखी कर देते हैं।

b. **क्षरणशील नागरिक संस्कृति**

ऐसी पाखंडपूर्ण संस्कृति में संवाद **सत्य-खोज** के बजाय **धार्मिकता का प्रदर्शन** बन जाता है।

c. **दार्शनिक चेतावनी**

दार्शनिक **जे. गारफ़ील्ड** चेतावनी देते हैं कि ऐसा ध्रुवीकरण **नागरिक संवाद** को कमजोर करता है, जो लोकतंत्र की आधारशिला है। बिना **सम्मान और विनम्रता** की साझा नैतिकता के संवाद ढह जाता है।

d. **पारस्परिक संलग्नता की अनिवार्यता**

स्वस्थ समाज के लिए आवश्यक है कि लोग समूह सीमाओं के पार संवाद करें, दूसरों के दृष्टिकोण को स्वीकारें और **मानवीय अपूर्णता** को समझें।

5. **व्यापक सामाजिक परिणाम**

a. **राजनीतिक अव्यवस्था**

बार-बार विधायी गतिरोध

न्यायपालिका के प्रति घटता सम्मान

नेताओं का **गुटों के प्रतिनिधि** बन जाना, न कि राजनेता

b. **सामाजिक और व्यक्तिगत हानि**

तनाव, चिंता, थकान

विचारधारा, जाति या पहचान के आधार पर समुदायों में दूरी

कार्यस्थलों पर संघर्ष, भेदभाव और सामूहिकता का क्षरण

c. **डिजिटल विस्तार**

भ्रामक सूचना से भरोसा घटता है

भावनात्मक हेरफेर चरम प्रतिक्रियाएँ पैदा करता है

इको-चैंबर मतभेदों को और चौड़ा कर देते हैं

6. **आगे का मार्ग: समाधान और आवश्यकताएँ**

a. **नैतिक आवश्यकताएँ**

तटस्थता को लोकतांत्रिक गुण के रूप में बचाना

जटिलता, अस्पष्टता और बहु-कारक सोच को स्वीकारना

निर्णय में संतुलन और संयम को महत्त्व देना

b. **सामाजिक अपेक्षाएँ**

विपक्षी को शत्रु नहीं, **सहराष्ट्रीय नागरिक** समझना

विनम्रता और गहन सुनने की आदत विकसित करना

अपने और दूसरों की अपूर्णताओं को स्वीकारना

c. **लोकतांत्रिक अनिवार्यता**

मध्यमार्ग कोई आदर्शवाद नहीं बल्कि

आवश्यक है—

लोकतांत्रिक शासन को पुनर्स्थापित करने के लिए

पारस्परिक भरोसा लौटाने के लिए

शांतिपूर्ण सहअस्तित्व और सामूहिक प्रगति सुनिश्चित करने के लिए

निष्कर्ष

आज जब **क्रोध को महिमा** और **संयम को उपहास** दिया जा रहा है, समाज को **सम्मानजनक संवाद**, **तर्कपूर्ण असहमति**, और **सहानुभूतिपूर्ण समझ** को पुनः अपनाने की आवश्यकता है। असहमति में भी समझ को चुनना और क्रोध के ऊपर तर्क को रखना एक **नागरिक साहस** है। यही एकमात्र टिकाऊ मार्ग है जो लोकतंत्र को **ध्रुवीकरण के क्षरणकारी प्रभावों** से बचा सकता है और समाज को अधिक **स्थिर, मानवतावादी और प्रगतिशील** दिशा में ले जा सकता है।

How to use it

भारतीय लोकतंत्र के मूल्यों के लिए **सार्वजनिक विमर्श का पतन**—जहाँ विवेकपूर्ण विचार-विमर्श की जगह **ध्रुवीकृत प्रदर्शन** ने ले ली है—एक गंभीर खतरा है। यह शासन की नैतिक नींव को क्षीण करता है, प्रभावी नीति-निर्माण को बाधित करता है, और समाज को विभाजित करता है। सम्मानजनक संवाद को पुनर्स्थापित करना किसी **नरम, आदर्शवादी लक्ष्य** की तरह नहीं बल्कि **प्रशासनिक दक्षता, सामाजिक सौहार्द** और **लोकतांत्रिक संस्थाओं के अस्तित्व** के लिए एक कठोर आवश्यकता है।

प्रमुख संदर्भ: GS Paper IV (Ethics, Integrity & Aptitude)

1. **Ethics and Human Interface**

कैसे उपयोग करें: यह पूरे मुद्दे का नैतिक सार है।

मुख्य बिंदु:

नैतिक संवाद का सार: लेख इस बात पर चिंता जताता है कि "विवेकपूर्ण विचार-विमर्श" की जगह "भावनात्मक उकसावे" और "कर्कश पक्षपात" ने ले ली है। नैतिक संवाद का आधार **सम्मान, सहानुभूति** और सत्य के प्रति प्रतिबद्धता है, न कि जीतने की इच्छा।

गुण बनाम अवगुण: वर्तमान संकट में अहंकार, असहिष्णुता और जनजातीय सोच जैसे **अवगुणों की विजय** दिखाई देती है, जबकि विनम्रता, निष्पक्षता और साहस जैसे **नैतिक गुण** कमजोर पड़ रहे हैं।

2. **Attitude: Content, Structure, Function; its Influence on Behaviour**

कैसे उपयोग करें: ध्रुवीकृत संवाद के पीछे की मानसिकता का विश्लेषण करें।

मुख्य बिंदु:

दृष्टिकोण का प्रभाव: "तटस्थता के प्रति बढ़ती घृणा" और "समझौते को विश्वासघात मानना"—ये विकृत दृष्टिकोण सीधे

सार्वजनिक व्यवहार, विधायी गतिरोध और सामाजिक संघर्ष को बढ़ाते हैं।

साहसी तटस्थता: लेख तटस्थता को निष्क्रियता नहीं बल्कि **साहस** का रूप बताता है—जो संतुलित निर्णय के लिए आवश्यक है, और यह सिविल सेवक के लिए एक महत्वपूर्ण मानसिकता है।

3. **Emotional Intelligence**

कैसे उपयोग करें: समाधान को भावनात्मक बुद्धिमत्ता से जोड़ें।

मुख्य बिंदु:
सम्मानजनक संवाद के लिए **उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता** आवश्यक है:
सहानुभूति—विपरीत विचारों को समझने के लिए
स्व-नियमन—उग्र प्रतिक्रिया को नियंत्रित करने के लिए
सामाजिक कौशल—सहमति निर्माण और संतुलित संवाद के लिए

4. **Contributions of Moral Thinkers and Philosophers**

कैसे उपयोग करें: लेख में दिए दार्शनिक दृष्टिकोण को शामिल करें।

मुख्य बिंदु:
दार्शनिक **जे. गारफ़ील्ड** की चेतावनी यह बताती है कि नागरिक संवाद लोकतंत्र की नींव है। इसे **गांधीजी** के सत्याग्रह और प्रतिद्वंद्वी के सम्मान जैसे सिद्धांतों से जोड़ा जा सकता है, जो आज के ध्रुवीकृत विमर्श के विपरीत हैं।

5. **Public/Civil Service Values and Ethics in Administration**

कैसे उपयोग करें: सीधे सिविल सेवा की भूमिका से जोड़ें।

मुख्य बिंदु:
प्रशासन पर खतरा: ध्रुवीकृत माहौल में सिविल सेवक के लिए "शत्रुतापूर्ण वातावरण में जीवित रहना" संतुलित संवाद से अधिक चुनौतीपूर्ण बन जाता है। यह सुशासन में बाधा है।

सिविल सेवक की भूमिका: अधिकारी को **मध्यमार्ग** अपनाना होगा—तटस्थता और निष्पक्षता की रक्षा करना, सभी हितधारकों से विनम्रता से संवाद करना, और निर्णय **तथ्यों व तर्क** पर आधारित करना, न कि राजनैतिक दबाव या जन-क्रोध पर।

अन्य GS पेपरों से लिंक

GS Paper II (Governance)
शासन की चुनौतियाँ: लेख में "राजनीतिक गतिरोध," "विधायी अवरोध," और "न्यायपालिका के प्रति सम्मान में गिरावट" जैसे परिणाम बताए गए हैं—ये दिखाते हैं कि संवाद का पतन सीधे-अनुपाती तौर पर **गवर्नेंस फेल्योर** में बदलता है।

मीडिया और सोशल मीडिया की भूमिका: "ध्रुवीकृत प्लेटफ़ॉर्म" और "डिजिटल

एल्गोरिद्म" की आलोचना सूचना प्रबंधन और मीडिया नैतिकता से संबंधित है।

GS Paper I (Indian Society)

भारतीय समाज की विशेषताएँ: सम्मानजनक संवाद का क्षरण "विविधता में एकता" के ताने-बाने को कमजोर करता है और समाज को विचारधारात्मक समूहों में बाँटता है।

सामाजिक सशक्तिकरण: "असहमति का दमन" और "चरित्र पर हमले" विशेष रूप से **हाशिये पर मौजूद समूहों** को चुप कराते हैं, जिससे वास्तविक सामाजिक सशक्तिकरण बाधित होता है।

भारत में संख्यात्मकता की खाई को पाटना

फाउंडेशनल लिटरेसी एंड न्यूमरसी (FLN) राष्ट्रीय शिक्षा नीति (**NEP 2020**) का मूल आधार है, जो प्रारंभिक शिक्षा को भारत के **मानव पूंजी विकास का स्तंभ** मानती है। *NIPUN भारत मिशन* जैसी पहलों ने बुनियादी साक्षरता को मज़बूत किया है, लेकिन भारत अब भी एक **स्थायी और बढ़ती हुई "संख्यात्मकता की खाई"** (numeracy gap) से जूझ रहा है। यह खाई शैक्षिक प्रगति, रोजगार क्षमता और आर्थिक विकास को गंभीर रूप से प्रभावित करती है।

---

1. वर्तमान स्थिति: संख्यात्मक चुनौती को समझना

a. नीतिगत पहल और शुरुआती प्रगति

- **NEP 2020** ने FLN को राष्ट्रीय सीखने के लक्ष्य के रूप में प्राथमिकता दी।
- **NIPUN भारत मिशन** ने पढ़ने की क्षमता और कक्षा में शिक्षण पद्धतियों में सुधार किया।

b. लगातार बनी रहने वाली सीखने की खाई

- प्रगति के बावजूद, **संख्यात्मकता हर राज्य में साक्षरता से काफी पीछे** है।

ASER 2024 के निष्कर्ष:

- **48.7%** कक्षा 5 के बच्चे धाराप्रवाह पढ़ सकते हैं।
- लेकिन केवल **30.7%** बच्चे *बुनियादी भाग* हल कर सकते हैं — **18 प्रतिशत अंक का अंतर**।
- **कोई भी राज्य** साक्षरता से बेहतर संख्यात्मकता नहीं दिखाता।
- यह खाई *संरचनात्मक है, आकस्मिक नहीं*।

---

2. भारत में संख्यात्मक खाई के मूल कारण

a. गणित का संचयी (Cumulative) स्वरूप

गणित क्रमिक रूप से सीखा जाता है:

स्थान-मूल्य → जोड़/घटाव → गुणा → भाग → भिन्न → बीजगणित

शुरुआती कमियां आगे चलकर गंभीर बाधा बन जाती हैं।

b. पारंपरिक शिक्षण और पाठ्यक्रम असंगति

- पाठ्यक्रम "किताब की गति" से चलता है, *बच्चे की सीखने की क्षमता* से नहीं।
- शिक्षक अक्सर "*टेक्स्टबुक-केन्द्रित*" शिक्षण करते हैं।
- कक्षा में सीखने के स्तरों का बड़ा अंतर खाई को और चौड़ा करता है।

c. स्कूल गणित और वास्तविक जीवन का disconnect

- बच्चे कक्षा में सीखे गणित को **वास्तविक जीवन** में लागू नहीं कर पाते।
- वहीं, दुकानदारी जैसे वास्तविक जीवन के अनुभवों को वे **औपचारिक गणित** में नहीं बदल पाते।
- इससे *प्रेरणा और आत्मविश्वास* दोनों घटते हैं।

---

3. संख्यात्मकता की खाई के परिणाम

a. शैक्षणिक प्रभाव

- गणित और विज्ञान में बोर्ड परीक्षाओं में उच्च विफलता दर।
- कक्षा 10 से पहले स्कूल छोड़ने का एक बड़ा कारण *गणित की कठिनाई* है।

b. दीर्घकालिक आर्थिक और सामाजिक प्रभाव

- उच्च शिक्षा और व्यावसायिक अवसरों तक सीमित पहुँच।
- तकनीक-चालित श्रम बाज़ार में कम *रोज़गार क्षमता*।
- कमजोर बुनियादी कौशल के कारण राष्ट्रीय उत्पादकता प्रभावित।

---

4. समाधान: नीति सुधार और आगे की राह

A. FLN हस्तक्षेपों को *उच्च प्राथमिक कक्षाओं* तक बढ़ाएँ

- वर्तमान कार्यक्रम केवल कक्षा 1–3 तक सीमित हैं, जबकि संकट उससे आगे तक फैला है।

ASER 2024 तथ्य:

- **70%** कक्षा 5
- और **50%** कक्षा 8 बुनियादी भाग नहीं कर सकते।

सफल मॉडल:

दादरा और नगर हवेली, दमन और दीव ने FLN पद्धति को *मिडिल ग्रेड* तक बढ़ाकर उत्कृष्ट परिणाम पाए।

B. FLN+ कौशल जोड़ें

सिर्फ बुनियादी गणित नहीं, बल्कि:

MENTORA IAS "YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

- **भिन्न**, **दशमलव**, **प्रतिशत**, **अनुपात**, **पूर्णांक**
  ये आवश्यक हैं:
- बोर्ड परीक्षाओं
- उच्च स्तरीय गणित
- तर्कशक्ति
- रोज़मर्रा की समस्या-समाधान क्षमता के लिए

C. कक्षा शिक्षण में सुधार

- *ग्रेड-लेवल* के बजाय *लर्निंग-लेवल* शिक्षण अपनाएँ।
- उन्नत अवधारणाओं के लिए भी **गतिविधि-आधारित, बाल-हितैषी NIPUN पद्धति** अपनाएँ।
- लक्षित और सतत *रिमेडियल सपोर्ट* प्रदान करें।

D. गणित को वास्तविक और सार्थक बनाएं

- गणित को जीवन से जोड़ें: **मापन, बजटिंग, खरीदारी, समय, नक्शे**
- रटे हुए तरीकों के बजाय *समस्या-समाधान कौशल* विकसित करें।
- बच्चों में यह भावना जगाएँ कि "**गणित उपयोगी, सहज और अर्थपूर्ण है**।"

निष्कर्ष

भारत की संख्यात्मकता की खाई **गहरी, व्यापक और गंभीर** है। जहाँ साक्षरता में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, वहीं **गणित शिक्षा अब भी शिक्षा प्रणाली की सबसे कमजोर कड़ी** बनी हुई है। इसे दूर करने के लिए आवश्यक है कि हम:

- **FLN को मध्य कक्षाओं तक बढ़ाएँ**,
- **महत्वपूर्ण FLN+ अवधारणाएँ शामिल करें**, और
- **गणित को वास्तविक जीवन से जोड़ें**।

संख्यात्मक खाई को पाटना केवल शिक्षा सुधार नहीं —
यह सामाजिक, आर्थिक और राष्ट्रीय विकास की अनिवार्यता है।

How to use it

स्थायी **संख्यात्मकता की खाई** गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की आपूर्ति में एक गंभीर विफलता का प्रतीक है, जो **जनसांख्यिकीय लाभ** (demographic dividend) और **राष्ट्रीय शिक्षा नीति** (NEP 2020) के लक्ष्यों को कमजोर कर सकती है। यह केवल एक शैक्षिक समस्या नहीं है, बल्कि एक व्यापक **सत्ता, प्रशासन और विकासात्मक चुनौती** है, जिसका सीधा असर

सामाजिक समानता, आर्थिक उत्पादकता और राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा पर पड़ता है।

प्राथमिक प्रासंगिकता: GS Paper II (Governance, Social Justice)

---

1. सामाजिक क्षेत्र/सेवाओं के विकास और प्रबंधन से संबंधित मुद्दे (Health, Education, Human Resources)

कैसे उपयोग करें: यह मुख्य क्षेत्र है। संख्यात्मकता की खाई शिक्षा क्षेत्र की चुनौतियों का सीधा परिणाम है।

मुख्य बिंदु:

- **नीति-कार्यान्वयन अंतर (Policy-Implementation Gap):** NEP 2020 और **NIPUN भारत मिशन** ने सही रूप से **फाउंडेशनल लिटरेसी और न्यूमरसी (FLN)** को प्राथमिकता दी है। लेकिन वास्तविक आंकड़े (जैसे कक्षा 5 के केवल **30.7%** छात्र भाग कर सकते हैं, जबकि **48.7%** पढ़ सकते हैं) यह स्पष्ट करते हैं कि **विशेषकर संख्यात्मकता में कार्यान्वयन में गंभीर कमी** है।
- **शासन और प्रशासन चुनौती (Governance Challenge):** खाई दर्शाती है कि **शिक्षक प्रशिक्षण, शिक्षण पद्धति और पाठ्यक्रम डिजाइन में विफलताएँ** हैं। "पाठ्यक्रम-केन्द्रित शिक्षण" पर अत्यधिक जोर और "सीखने-स्तर पर आधारित शिक्षण" पर कम ध्यान देना **शैक्षिक प्रशासन में मूलभूत शासन दोष** है।

---

2. कमजोर वर्गों के लिए कल्याणकारी योजनाएँ

कैसे उपयोग करें: सीखने के संकट के **सामाजिक समानता आयाम** का विश्लेषण करें।

मुख्य बिंदु:

- संख्यात्मकता की खाई **आर्थिक रूप से कमजोर बच्चों और प्रथम-पीढ़ी शिक्षार्थियों** को असमान रूप से प्रभावित करती है, जिन्हें घर पर शैक्षिक समर्थन नहीं मिलता।
- यह **मौजूदा सामाजिक असमानताओं को बढ़ाता है** और **सामाजिक गतिशीलता को बाधित** करता है।

प्राथमिक प्रासंगिकता: GS Paper III (Economy)

---

1. भारतीय अर्थव्यवस्था और योजना, संसाधन जुटाना, विकास और रोजगार संबंधी मुद्दे

कैसे उपयोग करें: संख्यात्मकता की खाई को **मानव पूंजी निर्माण और आर्थिक विकास** से जोड़ें।

मुख्य बिंदु:

- **मानव पूंजी संकट (Human Capital Crisis):**
  बुनियादी संख्यात्मकता एक कुशल कार्यबल की नींव है।
  खाई भविष्य के इंजीनियरों, डेटा विश्लेषकों, वैज्ञानिकों और कुशल तकनीशियनों के लिए कमजोर आधार बनाती है, जो सीधे **मानव पूंजी की गुणवत्ता** को प्रभावित करती है।
- **रोजगार क्षमता पर प्रभाव (Impact on Employability):**
  तकनीक-आधारित अर्थव्यवस्था में, कमजोर संख्यात्मकता के कारण **रोजगार क्षमता कम** होती है और व्यक्तियों को **कम-कौशल, कम-वेतन वाले कार्यों** तक सीमित रखा जाता है।
  इससे **संपूर्ण उत्पादकता और आर्थिक विकास** प्रभावित होता है।

---

2. समावेशी विकास और उससे संबंधित चुनौतियाँ

कैसे उपयोग करें: इसे **समावेशी विकास के लिए बाधा** के रूप में प्रस्तुत करें।

मुख्य बिंदु:

- यदि इस बुनियादी कौशल की खाई को दूर नहीं किया गया, तो **समावेशी विकास की नीतियाँ असफल** रहेंगी।
- युवा वर्ग का बड़ा हिस्सा **विकसित अर्थव्यवस्था के लाभों से वंचित** रहेगा, जिससे **गरीबी का चक्र** लगातार बना रहेगा।

GS Paper IV (Ethics) से लिंक

- **शासन में नैतिकता (Ethics in Governance):**
  इस खाई की स्थायित्वता **शिक्षा प्रशासन की जवाबदेही और प्रतिबद्धता** पर प्रश्न उठाती है।
- **निष्पक्षता और सामाजिक न्याय (Impartiality and Social Justice):**
  यह सुनिश्चित करना कि प्रत्येक बच्चा, **पृष्ठभूमि से स्वतंत्र**, बुनियादी संख्यात्मकता हासिल करे, **सामाजिक न्याय और न्यायसंगत शासन** का मामला है।

"1 डॉक्टर प्रति 1,000 लोग" मानक को स्पष्ट करना – WHO की मिथक को तोड़ना

परिचय

भारत में **डॉक्टर-जनसंख्या अनुपात** पर बहस अक्सर एक व्यापक रूप से उद्धृत, लेकिन

गलत दावे पर आधारित रहती है कि **विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) 1 डॉक्टर प्रति 1,000 लोगों का मानक तय करता है।** हाल की विशेषज्ञ व्याख्याओं और स्पष्टीकरणों से पता चलता है कि इस मानक का कोई **आधिकारिक आधार नहीं है**, जिससे डेटा के गलत उपयोग और अविवेकपूर्ण नीति निर्माण की चिंताएँ उत्पन्न होती हैं।

---

1. WHO मानक का मिथक

a. सामान्य गलतफहमी

- 2015 से भारतीय सरकारी बयान अक्सर 1:1,000 डॉक्टर-जनसंख्या अनुपात को **WHO द्वारा अनुशंसित मानक** के रूप में प्रस्तुत करते रहे हैं।

b. WHO का आधिकारिक स्पष्टीकरण

- WHO स्पष्ट करता है कि वह किसी देश स्तर पर डॉक्टर-जनसंख्या अनुपात की सिफारिश नहीं करता।
- WHO यह नहीं बताता कि किसी देश में कितने डॉक्टर होने चाहिए।

c. ऐतिहासिक बदलाव

- **2000 से पहले:** सरकार ने कहा कि WHO का ऐसा कोई मानक नहीं है।
- **2015–2024:** संसद और नीति दस्तावेजों में 1:1,000 को WHO मानक के रूप में उद्धृत किया गया।
- यह **गलत atribuição पर आधारित नीति कथा** की शुरुआत है।

---

2. डेटा गणना में विसंगतियाँ

a. सरकार की गणना पद्धति

- अनुपात को अधिक अनुकूल दिखाने के लिए:
  - सभी एलोपैथिक डॉक्टरों की **100% उपलब्धता मान ली जाती है।**
  - **AYUSH चिकित्सकों** को जोड़ते हैं बिना वास्तविक उपलब्धता को समायोजित किए।
- इससे डॉक्टर-जनसंख्या अनुपात **कृत्रिम रूप से कम** दिखाई देता है।

b. संसदीय डेटा में भिन्नताएँ

- चार्ट और उत्तरों में अनुपात 1:1,672 से 1:1,900 तक भिन्न दिखा, जो **गणना की असंगति** को दर्शाता है।

---

3. मिथक की उत्पत्ति और विशेषज्ञ सत्यापन

a. विशेषज्ञ टिप्पणियाँ

- डॉ. चंद्रकांत लहरिया: WHO ने कभी डॉक्टर-जनसंख्या मानक जारी नहीं किया।
- डॉ. किरण कुम्भार: कोई भी WHO दस्तावेज 1:1,000 आंकड़े का समर्थन नहीं करता।

b. मिथक की शुरुआत

- पहली बार **Medical Council of India की "Vision 2015" रिपोर्ट (2011)** में दिखाई दिया।
- बाद में शोधकर्ताओं द्वारा बिना सत्यापन के उद्धृत किया गया।
- क्रॉस-साइटेशन ने **एक अनुमान को "तथ्य" में बदल दिया**, जिससे गलत सूचना का चक्र बना।

---

4. WHO वास्तव में क्या सिफारिश करता है

a. SDGs के लिए वैश्विक मानक

- WHO **संपूर्ण स्वास्थ्य सेवा कार्यकर्ताओं** (डॉक्टर + नर्स + दाई) के लिए 1,000 लोगों पर **4.45 कुशल स्वास्थ्य कर्मियों** का अनुशंसित स्तर देता है।

b. ऐतिहासिक विकास

- 2006: न्यूनतम सीमा 2.25 थी।
- संशोधित: SDG सेवा कवरेज के अनुरूप वर्तमान 4.45 तक बढ़ाया गया।

c. प्रमुख स्पष्टीकरण

- WHO कभी यह नहीं कहता कि इनमें से कितने डॉक्टर होने चाहिए।
- यह **टीम आधारित स्वास्थ्य कार्य** का मानक है, केवल डॉक्टरों का नहीं।

---

5. भारत की वर्तमान स्थिति और वास्तविक चुनौतियाँ

a. वैश्विक रैंकिंग

- डॉक्टर प्रति 1,000: 0.7 → रैंक 118/181 देशों में
- स्वास्थ्य कार्यकर्ता प्रति 1,000: 3.06 → रैंक 122/181, WHO के 4.45 मानक से कम

b. वास्तविक समस्या: वितरण, संख्या नहीं

- विशेषज्ञ बताते हैं:
  - ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में तीव्र असमानता
  - डॉक्टरों का शहरी केंद्रित होना
  - जिला अस्पतालों में विशेषज्ञों की कमी

- AYUSH चिकित्सकों को जोड़कर आंकड़ों को बढ़ाना

- **इसलिए भारत की मुख्य समस्या है स्वास्थ्य कर्मियों का असमान वितरण।**

---

6. मुख्य निष्कर्ष

a. मिथक खंडित

- 1:1,000 डॉक्टर-जनसंख्या अनुपात **WHO मानक नहीं है।**

b. डेटा का दुरुपयोग

- इसे नीति प्रगति दिखाने और राजनीतिक लाभ के लिए प्रयोग किया गया।

c. असली बाधाएँ

- डॉक्टरों का शहरों में संकेंद्रण
- ग्रामीण PHC और CHC में रिक्त पद
- कमजोर प्राथमिक स्वास्थ्य प्रणाली

d. नीति सिफारिश

- **संख्यात्मक लक्ष्य** से हटकर:
  - ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यबल को मजबूत करना
  - नियुक्ति को प्रोत्साहित करना
  - **नर्स-दाई आधारित टीम** बनाना
  - सभी क्षेत्रों में **समान वितरण सुनिश्चित करना**

निष्कर्ष

भारत की स्वास्थ्य चर्चा को **काल्पनिक 1:1,000 मानक** से आगे बढ़कर **स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के असमान वितरण** की वास्तविक समस्या पर ध्यान देना होगा।
सुधार के लिए आवश्यक हैं:

- **संरचनात्मक सुधार**,
- **यथार्थवादी कार्यबल योजना**,
- **डेटा उपयोग में पारदर्शिता**।

समीक्षात्मक दृष्टिकोण:
भारत की स्वास्थ्य चुनौती **एक काल्पनिक अनुपात पूरा करना नहीं**, बल्कि **कुशल स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के ग्रामीण-शहरी असमान वितरण को सुधारना** है।

How to use it

"1:1000 डॉक्टर-जनसंख्या अनुपात" मिथक को खंडित करना भारत में **साक्ष्य-आधारित नीति निर्माण और डेटा इंटीग्रिटी** में मौलिक विफलता को उजागर करता है। यह दर्शाता है कि कैसे एक **भ्रामक कथा** भारत के स्वास्थ्य तंत्र में गहरे संरचनात्मक समस्याओं, विशेषकर **स्वास्थ्य कर्मियों के असमान वितरण** को छिपाने के लिए इस्तेमाल की जा सकती है। यह संदेश देता है कि अब **काल्पनिक संख्यात्मक**

लक्ष्य के पीछे दौड़ने के बजाय **सुलभता, गुणवत्ता और समानता** जैसी वास्तविक शासन चुनौतियों पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है।

प्राथमिक प्रासंगिकता: GS पेपर II (Governance, Social Justice, Health)

---

1. स्वास्थ्य से संबंधित सामाजिक क्षेत्र/सेवाओं के विकास और प्रबंधन से जुड़ी समस्याएँ

कैसे उपयोग करें: यह विश्लेषण का मूल क्षेत्र है। मिथक ने सीधे स्वास्थ्य नीति योजना और मूल्यांकन को प्रभावित किया।

मुख्य बिंदु:

- **त्रुटिपूर्ण नीति मानक:** वर्षों तक, सरकारी नीति और संसदीय उत्तरों ने इस गलत मानक का उपयोग प्रगति मापने के लिए किया। इससे **संसाधनों का गलत आवंटन और नीति में लापरवाही** हो सकती है, क्योंकि ध्यान केवल कुल संख्या पर था, न कि स्वास्थ्य देखभाल की **गुणवत्ता और वितरण** पर।
- **वास्तविक संकट – वितरण और पहुँच:** वास्तविक समस्या भारत में डॉक्टरों की संख्या नहीं बल्कि **ग्रामीण-शहरी असमानता**, **विशेषज्ञों का शहरों में केंद्रीकरण**, और **प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों (PHCs) में रिक्त पद** हैं। यह स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच सुनिश्चित करने में मौलिक विफलता है, जो **स्वास्थ्य के अधिकार** का महत्वपूर्ण घटक है।
- **शासन में डेटा विश्वसनीयता:** वास्तविक उपलब्धता को समायोजित किए बिना AYUSH चिकित्सकों को शामिल करना **डेटा पारदर्शिता और जवाबदेही में कमी** को दर्शाता है। अच्छी शासन व्यवस्था के लिए **सटीक मेट्रिक्स** आवश्यक हैं ताकि समस्याओं का सही निदान किया जा सके।

---

2. शासन, पारदर्शिता और जवाबदेही के महत्वपूर्ण पहलू

कैसे उपयोग करें: उस प्रक्रिया की समीक्षा करें जिसने इस मिथक को जारी रहने दिया।

मुख्य बिंदु:

- **उचित परिश्रम की कमी:** यह तथ्य कि **MCI की Vision 2015 रिपोर्ट** से एक दावा WHO से सत्यापन किए बिना नीति-सत्य के रूप में प्रस्तुत किया गया, **साक्ष्य-आधारित निर्णय लेने की कमी** को दर्शाता है।
- **डेटा का राजनीतिक उपयोग:** कृत्रिम रूप से बढ़ाए गए अनुकूल अनुपात का उपयोग प्रगति दिखाने के लिए किया

MENTORA IAS
"YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"

गया, जिससे **सार्वजनिक बहस और जवाबदेही** कमजोर हुई।

अन्य GS पेपर से संबंध

GS पेपर III (अर्थव्यवस्था)

- **संसाधन जुटाना:** यह चर्चा स्वास्थ्य क्षेत्र में **मानव संसाधनों (डॉक्टर और नर्स) की कुशल तैनाती** से जुड़ी है, जो अर्थव्यवस्था के मानव पूंजी के लिए महत्वपूर्ण है।
- **सहित विकास (Inclusive Growth):** ग्रामीण-शहरी स्वास्थ्य असमानता **विसंगति और बहिष्कार** का उदाहरण है, जो **समावेशी विकास** को रोकती है।

GS पेपर IV (नैतिकता, ईमानदारी और योग्यता)

- **शासन में नैतिकता:** आधिकारिक दस्तावेज़ों में ज्ञात मिथक का जारी रहना **ईमानदारी, पारदर्शिता और निष्पक्षता** पर गंभीर नैतिक प्रश्न उठाता है।
- **रवैया (Attitude):** यह दर्शाता है कि शॉर्टकट खोजने और अनुकूल छवि प्रस्तुत करने का रवैया अपनाया गया, बजाय कठिन, संरचनात्मक समस्याओं को हल करने के।
- **निष्पक्षता और गैर-पक्षपातिता:** एक सिविल सेवक को **डेटा और सत्य के प्रति प्रतिबद्ध** होना चाहिए। इस संदर्भ में, उनका कर्तव्य होगा कि वे **सही तथ्य (WHO का वास्तविक दृष्टिकोण, वितरण संकट)** राजनीतिक कार्यपालिका को प्रस्तुत करें, भले ही यह राजनीतिक रूप से असुविधाजनक हो।

MENTORA IAS
"YOUR SUCCESS, OUR COMMITMENT"